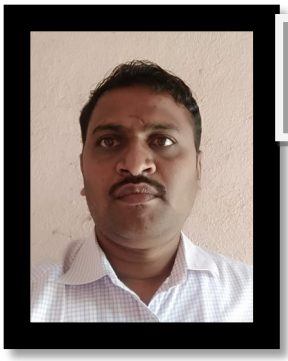

डॉ. जयराम सूर्यवंशी

सहयोगी प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, श्री संत गाडगे महाराज महाविद्यालय, लोहा जिला नांदेड, महाराष्ट्र

आधी आबादी की समग्र सच्चाई पर गंभीर चिंतन

भारतीय और वैश्विक नारी की स्थिति और गती को लेकर लगातार लिखा जा रहा है। देश और दुनिया की लगभग सभी भाषाओं में कई उपन्यास, कहानियाँ, वैचारिक ग्रंथ नारी के आधिकारों के समर्थन में लिखे गए हैं। किंतु फिर भी स्त्रियों की स्थिति बहुत बदली नहीं है। ऐसी स्थिती में भारतीय स्त्री को अपने अधिकारों के प्रति सचेत करने की दृष्टि से, उसके छीने गये हक उसे प्रदान करने की दृष्टि से लगातार लेखन, चिंतन की जरूरत है। इसी आवश्यकता की पूर्ती के रूप में 'स्त्री-विमर्श अवधारणा और स्वरूप' इस वैचारिक, चिंतनप्रधान ग्रंथ की ओर देखा जा सकता है। आर.के.पब्लिकेशन, मुंबई द्वारा प्रकाशित प्रस्तुत ग्रंथ दीर्घकाल तक हिंदी भाषा, साहित्य का अध्ययन अध्यापन करने के उपरांत पीपल्स कॉलेज, नांदेड से अवकाश ग्रहण करनेवाली लेखिका, चिंतक, संवेदनशील स्त्री प्रोफेसर रमा नवले की कलम से साकार हुआ है। लेखिका रमा नवले ने अध्ययन-अध्यापन के साथ-साथ हिंदी आलोचना में महत्वपूर्ण योगदान देते हुए, 'मृदुला गर्ग के कथा साहित्य में नारी', 'भूषण का प्रशस्ति काव्य', 'भाषा एवं साहित्य के विविध आयाम' के साथ-साथ महाराष्ट्र के वरिष्ठ दलित चिंतक सूर्यनारायण रणसुभे के आलोचना साहित्य की समीक्षा करते हुए 'समीक्षा की समीक्षा' जैसा महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखा है। अवकाश ग्रहण के बाद भी वे निरंतर रूप से लिख रही है। प्रस्तुत रचना उनके इसी लेखकीय प्रतिबद्धता का प्रमाण है।

प्रस्तुत ग्रंथ स्त्री विमर्श के विभिन्न आयामों को लेकर चिंतन करनेवाला एक महत्त्वपूर्ण वैचारिक ग्रंथ है। विज्ञान, इतिहास, चिकित्सा, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, कला, साहित्य जैसे ज्ञान के विभिन्न अनुशासनों का अध्ययन करते हुए इन अनुशासनों से संदर्भ लेते हुए लेखिका ने प्रस्तुत ग्रंथ में स्त्री विमर्श के सैद्धांतिक विश्लेषण के साथ साथ कई व्यवहारिक सच्चाईयों पर भी प्रकाश डाला है। प्रस्तुत ग्रंथ में युरोप के स्त्री जागरण से लेकर भारतीय नवजागरण तक के विभिन्न चिंतको के योगदान पर विस्तार से चर्चा मिलती है। साथ ही पश्चिमी विचारक वर्जिनिया वूल्फ, सीमोन दि बोउआ, केट मिलेट से लेकर हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श पर चर्चा करनेवाले उपन्यासकार प्रेमचंद, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, संजीव, भगवती चरण वर्मा आलोचक रोहिणी अग्रवाल, जगदीश्वर चतुर्वेदी तक का स्त्री विमर्श को लेकर चिंतन प्रस्तुत ग्रंथ के माध्यम से समझा जा सकता है। अध्ययन की सुविधा के लिए लेखिका ने प्रस्तुत रचना में स्त्री-विमर्श की अवधारणा, स्त्री-विमर्श का स्वरूप, स्त्री-विमर्श की वैचारिक पृष्ठभूमि के साथ साथ स्त्री-विमर्श के मुख्य वैचारिक प्रवाह, स्त्री-विमर्श की भाषा तथा उपलब्धियों पर विभिन्न अध्यायों में काफी विस्तार से और विभीन्न संदर्भों के साथ गहन चिंतन किया है। भारतीय तथा वैश्विक स्तर के कई स्त्रीवादी चिंतको के संदर्भ प्रस्तुत किताब में स्थान स्थान पर मिलते हैं। ग्रंथ के ब्लर्ब पर चिंतक सूर्यनारायण रणसूभे जी का मंतव्य, 'संभवत: पहली बार रमा बुलबुले नवले जी स्त्री विमर्श की सैद्धांतिकी को विस्तार के साथ प्रस्तुत कर रही है।' प्रस्तुत ग्रंथ की उच्च वैचारिकता को स्पष्ट करता है। प्रस्तुत ग्रंथ लिखने की आवश्यकता या प्रेरणा की दृष्टि से लेखिका की यह सोच है कि, 'स्त्री-विमर्श जैसा अत्यंत महत्त्वपूर्ण विषय आज भी

चिंता और चिंतन के केंद्र में नहीं दिखाई देता है। कुछ पुरुषों ने सहानुभूती के रूप में स्त्री-विमर्श पर चिंतन जरूर किया है किंतु स्त्री जीवन की विडंबना, स्त्री के नजरिए से एक स्त्री की भाषा में लिखी जानी चाहिए'। अत: इस परिप्रेक्ष में एक संवेदनशील स्त्री होने के नाते लेखिका स्वानुभूति के माध्यम से महिलाओं की स्थिति और गती को लेकर प्रस्तुत ग्रंथ के माध्यम से चिंतन करती है। कुल मिलाकर प्रस्तुत ग्रंथ की ओर 'स्त्री विमर्श के काव्यशास्त्र' के रूप में देखा जा सकता है। क्योंकि स्त्री विमर्श पर चिंतन करनेवाले किसी भी अध्येता के लिए प्रस्तुत ग्रंथ दिशादर्शक है।

'स्त्री की अवधारणा एवं स्वरूप' शीर्षक के प्रथम अध्याय में 'स्त्री' इस अवधारणा को लेकर बड़े विस्तार से सैद्धांतिक चर्चा मिलती है। 'स्त्री' शब्द की परिभाषा, स्त्री शब्द के विभिन्न अर्थ, स्त्री पुरुष साम्य और भेद ऐसे कई मुद्दों पर इस अध्याय में बड़ी गंभीर बहस हुई है। स्त्री-पुरुष समानता के इस दौर में जब स्त्रियों को दोयम स्थान दिया जा रहा है, लडका और लडकी के साथ अलग अलग व्यवहार किया जा रहा है। तो यह लेखिका की दृष्टि से चिंता का विषय बन जाता है। बचपन से ही लडका और लडकी की ओर अलग अलग दृष्टि से देखा जाता है। बचपन मे जहाँ लडकियों को गुडिया, रसोई के सामान खेलने के लिए दिए जाते हैं वही लडको को मोटरगाडी, बंदुके, जहाज, टँक दिए जाते हैं। इस मानसिकता के माध्यम से भी हमारी पुरुष वर्चस्वादी सोच उजागर होती है ऐसा लेखिका का कहना है। जिस स्त्री ने खेती को जन्म दिया, जो स्वयं उर्वरा है उस स्त्री को कभी किसान नहीं माना गया। हिंदी में किसान शब्द का स्त्रीलिंगी शब्द मिलना भी दुर्लभ है इस विषमता की ओर लेखिका पाठकों का ध्यान आकर्षित करती है। राष्ट्रीय बेरोजगारी पर विचार करते समय स्त्रियों की बेरोजगारी भी चिंतन का विषय होना चाहिए इस महत्वपूर्ण बिंदू को भी लेखिका ने प्रस्तुत अध्याय में उपस्थित किया है।

'स्त्री विमर्श अवधारणा एवं स्वरूप' शीर्षक के दूसरे अध्याय में लेखिका स्त्री विमर्श के साथ-साथ दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक, किसान, वृद्ध, बाल विमर्शों से जुड़ी सैद्धांतिक जानकारी देती है। साथ ही इन विमर्शों में स्त्री विमर्श का स्थान रेखांकित करते हुए मौजूदा दौर में नारी विमर्श पर चर्चा की आवश्यकता कितनी है? इस बात की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करती है। आज पितृसत्ताक समाजव्यवस्था में लडके का बडा होना एक रचनात्मक प्रक्रिया माना जाता है, जबकी लडकी का बडा होना एक निषेधात्मक प्रक्रिया माना जाता है। ऐसा भेदभाव क्यों? जीवशास्त्रीय विषमता छोडकर बौद्धिक और नैतिक दृष्टी से स्त्री और पुरुष लगभग समान होते हैं इसको लेकर लेखिका ने कई वैज्ञानिक संदर्भ प्रस्तुत अध्याय में दिए हैं।

'स्त्री विमर्श के आधार' यह अध्याय प्रस्तुत किताब का एक बहुत महत्वपूर्ण अध्याय है। जिसमें स्त्री पुरुष असमानता को हवा देनेवाले कुछ कारकों पर चर्चा की है। लेखिका इस अध्याय में जैविक, सामाजिक, संस्कृतिक, राजनीतिक तथा आर्थिक आधारों की बात करते हुए यह साबित करती है कि, विभिन्न पद्धतियों से स्त्रियों को पुरुषप्रधान व्यवस्था दोयम स्थान देने की साजिश करती रही है। जैविक दृष्टि से स्त्री और पुरुष में प्राकृतिक भेदभाव के अलावा कोई भेदभाव नहीं है, फिर भी यहाँ की व्यवस्था ने उसे बार-बार कनिष्ठ सिद्ध किया है। सामाजिक व्यवस्था में पुरुष मुखिया की भूमिका में सामने आया वहीं स्त्री को चार दिवारों तक सीमित किया गया। सांस्कृतिक उत्सव, त्योहारों में भी व्रत, उपवासों की जिम्मेदारी स्त्री पर डाली गई। तो आर्थिक आधार पर उसके कामकाज का कोई मूल्यांकन नहीं हुआ। अर्थव्यवस्था में उसके योगदान पर कभी गंभीरता से चर्चा नहीं हुई। इसके साथ-साथ लेखिका राजनीतिक आधार की बात करते हुए कहती है, 'राजनीति में महिलाओं की उपस्थित चिंतनीय है। स्थानिक सरकारों में भले ही उसके लिए 33% आरक्षण घोषित किया गया हो किंतु व्यावहारिक

दृष्टि से वह उस आरक्षण का लाभ नहीं ले सकती है। उसकी जगह परिवार का कोई पुरुष सदस्य कामकाज देखता है। खुद उसके मतदान का निर्णय भी उसके हाथ में नहीं है।' ऐसे कई अहम सवाल इस अध्याय में लेखिका ने उठाए हैं।

हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श भले ही आस्सी के दशक में चर्चा के केंद्र में आया हो, किंतु वैश्विक परिस्थितियों को देखने के उपरांत यह ज्ञात होता है कि, 14 वीं से 17 वीं सदी के बीच हुए यूरोपीय जागरण (रेनेसा युग) के दौर में स्त्रियों के हकों के प्रति यूरोपीय समाज में चेतना का आरंभ हुआ था। प्रस्तुत किताब के चतुर्थ अध्याय में लेखिका ने स्त्री विमर्श की पाश्चात पृष्ठभूमि को लेकर बडे विस्तार से चर्चा की है। जिसमें मेरी वोल्स्टोन क्राफ्ट, सारा मार्गरेट फुल्लर, जॉन्स स्टुअर्ट मिल, वर्जिनिया वूल्फ, सीमोन दि बोउआ केट मिलेट जैसै पाश्चात्य जगत के चिंतकों द्वारा स्त्री उत्थान की दृष्टि से किए चिंतन को रेखांकित किया गया है। पाश्चात्य जगत में नारीवादी आंदोलन की बुनियादी रुपरेखा तैयार करने वाली मेरी वोल्स्टोन क्राफ्ट के योगदान का मुल्यांकन करते हुए लेखिका उसे 'महिलाओं की समानता के लिए तर्क के आधार पर उठाई गई पहली आवाज' मानती है। इसके अलावा 'उन्नीसवीं शताब्दी में महिला' इस शीर्षक की किताब के माध्यम से स्त्री जागरण के आंदोलन को दिशा देने वाली सारा मार्गरेट फुल्लर का योगदान भी उतना ही महत्वपूर्ण है। जॉन स्टुअर्ट मिल जैसे पुरुषों ने भी स्त्री अधिकारों का मुखर समर्थन करते हुए स्त्री की तत्कालीन बदहाली के लिए पुरुष वर्चस्वाद और धर्म को जिम्मेदार ठहराया है, तो वर्जीनिया वुल्फ ने अपने चिंतन के माध्यम से 'साहित्य और इतिहास पुरुष द्वारा निर्मित होता है इसलिए इन दोनों में महिलाओं को हाशिए पर रखा गया है'। परिणामस्वरुप स्त्री को अपने आप को विकसित करने के लिए 'खुद का एक कमरा होना चाहिए' इस बात पर वर्जीनिया बल देती है। 'ए रुम आफ वन्स ओन' यह संकल्पना वर्जीनिया द्वारा प्रचलित की गई संकल्पना है। इस प्रकार के कई ऐतिहासिक तथ्य प्रस्तुत अध्याय में पाठकों को पढ़ने के लिए मिलते हैं। जिससे पाश्चात्य जगत में स्त्री विमर्श के आंदोलन की दशा और दिशा स्पष्ट होती है। इसी क्रम में अगले अध्याय में भारतीय समाज में स्त्री विमर्श को लेकर चिंतन करने वाले बंगाल, महाराष्ट्र के नवजागरणकालीन समाज सुधारकों के कार्य पर भी प्रस्तुत ग्रंथ में बड़े विस्तार से चर्चा की गई है। सती प्रथा के खिलाफ आवाज उठानेवाले राजा राममोहन राय, स्त्रियों की शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण प्रश्न को लेकर आंदोलन करने वाले कृतिशील समाज सुधारक महात्मा ज्योतिबा फुले, सावित्रीबाई फुले के अलावा प्रखर स्त्रीवादी लेखिका ताराबाई शिंदे, पंडिता रमाबाई, रुकैया सखावत हुसैन जैसे नवजागरण कालीन आंदोलन कर्ताओं के योगदान पर बड़े विस्तार से चर्चा मिलती है। साथ-साथ इसी अध्याय में आधुनिक हिंदी साहित्य के आरंभिक दौर की उन महिला लेखिकाओं के लेखन पर चर्चा की गई है जो अब तक हिंदी साहित्य के केंद्र में नहीं थी। इन लेखिकाओं में दुखिनी बाला की रचना 'सरला : एक विधवा की आत्मजीवनी', स्फुरन देवी की 'अबलाओं का इंसाफ', अज्ञात हिंदू महिला की, 'सीमंतिनी उपदेश' आदि अचर्चित रचनाओं पर चर्चा की गई है।

भारतीय तथा पाश्चात्य चिंतकों द्वारा पिछले दो सौ वर्षों से स्त्री उत्थान की दृष्टि से किए गए चिंतन, विभिन्न आंदोलन आदि पर चर्चा के साथ-साथ प्रस्तुत ग्रंथ में लेखिका स्त्री विमर्श के प्रमुख वैचारिक प्रवाहों पर भी बहस करती है। क्योंकि भले ही सभी चिंतकों का उद्देश्य स्त्री को नकारे गए अधिकार प्रदान करना, पुरुष के बराबर उसे हक प्रदान करना यह रहा हो किंतु इन विचारकों के मार्ग भिन्न-भिन्न रहे हैं। इस कारण स्त्री विमर्श में विभिन्न प्रवाहों का प्रचलन हुआ। जिसमें कुछ चिंतकों ने उदारवादी भूमिका से स्त्रीवादी आंदोलन को आगे बढ़ाया, तो कुछ चिंतकों ने आर्थिक शोषण का शिकार स्त्री को मार्क्सवादी दृष्टि से देखते हुए उसे आर्थिक स्तर पर उन्नत करने की दृष्टि से कोशिश की। कुछ समाजवादी चिंतक भी दिखाई देते हैं तो उग्र नारीवाद यह भी प्रवाह सन् 1960 के इर्दगीर्द अमेरिका में शुरु होकर इंग्लैंड, ऑस्ट्रेलिया तक फैला हुआ बड़ा महत्वपूर्ण नारीवादी आंदोलन रहा है। इस ओर भी लेखिका पाठकों का ध्यान आकर्षित करती है। दलित स्त्रीवाद या ब्लैक फेमिनिज्म यह भी उतना ही महत्वपूर्ण नारीवादी आंदोलन है जिसमें दलित चिंतकों ने दलित स्त्रियों पर हुए अन्याय, अत्याचार को लेकर चर्चा की है।

इस प्रकार के विभिन्न प्रवाहों को प्रस्तुत ग्रंथ के माध्यम से बड़ी सूक्ष्मता से समझा जा सकता है।

किताब में स्त्री विमर्श की भाषा को लेकर भी लेखिका बड़ी संवेदनशील चर्चा करती है। उनकी दृष्टि से स्त्री की भाषा और पुरुष की भाषा अलग होती है। भाषा के

माध्यम से हमारे साहित्य में पुरुष वर्चस्ववादी सोच उजागर होती है। राष्ट्रपति, कुलाधिपति, कुलपति जैसे पदवीसूचक शब्द पुरुषप्रधान रहे हैं। अतः भाषिक दृष्टि से सजग होने की नितांत आवश्यकता की ओर लेखिका संकेत करती है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि, प्रस्तुत ग्रंथ स्त्री विमर्श की अवधारणा, स्वरूप के साथ-साथ भारतीय और पाश्चात्य चिंतन परंपरा में नारीवादी चिंतन की स्थिति और गति को लेकर चर्चा करने वाला एक बहुत चिंतन प्रधान ग्रंथ है। साहित्य, संस्कृति और समाज में स्त्री की स्थिति क्या है? उसकी बदहाली दूर करने की दृष्टि से किस प्रकार प्रयास किए गए है? ऐसे तमाम सवालों पर बड़ी संवेदनशीलता के साथ लेखिका रमा नवले जी ने अपने ग्रंथ में विचारोत्तेजक चर्चा की है। स्त्री विमर्श को संपूर्णता से समझने के लिए यह ग्रंथ अत्यंत उपयुक्त है। इसमें संदेह नहीं।